डॉ० गंगादत्त शास्त्री विनोद

❒ डॉ० सत्यपाल श्रीवत्स

अपने विनोदी स्वभाव के कारण 'विनोद शास्त्री' नाम से प्रसिद्ध गंगा दत्त जी जम्मू-कश्मीर राज्य के प्रख्यात हिन्दी-संस्कृत साहित्यकारों में अन्यतम थे।

जम्मू नगर से उत्तर पश्चिम की ओर बसे अम्बगरोटा गांव के समीपवर्ती एक पिछड़े गांव 'सोवका' में इनका जन्म 1920 ई० में संस्कृत के धुरन्धर विद्वान पं० हाकिम शर्मा के घर हुआ था। इनकी माता जी का नाम केसरी देवी था।

यह अभी छः वर्ष की अवस्था से ही गुजर रहे थे तो इनके पिता जी का स्वर्गवास हो गया था, जिससे इनकी माता अपने अबोध बच्चों के साथ अति असहायावस्था में पहुंच गई, परन्तु उस पालन हार परमात्मा को सभी के भरण-पोषण की चिन्ता होती है, अतः वह सभी के जीवन-यापन का प्रबन्ध किसी न किसी ढंग से कर ही देता है। क्योंकि बालक गंगा दत्त के पिता ने जम्मू-नगर के कई गण्य-मान्य घरानों में अपनी विद्वत्ता के कारण अपना सम्माननीय स्थान चिरकाल से बनाया हुआ था, अतः उनमें से कइयों ने इनकी माता को बच्चों सहित जम्मू नगर में बुलाकर एक किराये के मकान में ठहराकर उनके खान-पान आदि का सन्तोषजनक सुचारु प्रबन्ध कर दिया था। इतना ही नहीं अपितु बालक गंगा दत्त को श्री रघुनाथ संस्कृत महाविद्यालय में प्रविष्ट भी करवा दिया। वहां पर गंगा दत्त जी ने शास्त्री तक बड़े परिश्रम से अध्ययन करके लाहौर विश्वविद्यालय से उक्त परीक्षा उच्च श्रेणी प्राप्त करके उत्तीर्ण की।

परिणामतः धर्मार्थ ट्रस्ट (जम्मू-कश्मीर) ने इन्हें छात्रवृत्ति देकर बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी में ऋग्वेदाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए भेजा। उन दिनों आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करनी इसलिए कठिन होती थी क्योंकि विश्वविद्यालय के छात्रावास में रहकर छः वर्षों तक अध्ययन करके परीक्षा उत्तीर्ण के बाद ही उक्त उपाधि प्राप्त होती थी।

क्योंकि उन दिनों उस विश्वविद्यालय के संस्थापक पं० मदन मोहन मालवीय जी जीवित थे और संयोग से विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० सर्व पल्ली राधा कृष्णन् थे, जो भारतीय और पाश्चात्य दर्शन शास्त्रों के विश्वविख्यात विद्वान थे। सौभाग्य से उस समय विश्वविद्यालय के कॉलेज आफ इन्डॉलोजी के श्री चिन्न स्वामी शास्त्री प्रिंसिपल थे और श्री पट्टाभिराम शास्त्री और सुब्रहमण्यम् शास्त्री प्राध्यापक थे। यही कारण था कि उस समय विश्वविद्यालय की ख्याति

देश-विदेश में फैली हुई थी। उन दो विभूतियों पं० मालवीय जी तथा डॉ० राधा कृष्णन के कारण ही उस विश्वविद्यालय में समय-समय पर वहां महात्मा गांधी, पं० जवाहर लाल नेहरू, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, जय प्रकाश नारायण एवं आचार्य नरेन्द्र देव जैसे प्रसिद्ध नेतागण तथा महीयसी महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि अनेक कवि और साहित्यकार आकर विश्वविद्यालय के अध्यापकों तथा छात्रों को अपने भाषणों तथा सदुपदेशों से तृप्त ही नहीं करते थे, अपितु उनका ज्ञानवर्द्धन भी करते रहते थे। ज्ञान-जिज्ञासु युवा छात्र गंगा दत्त शास्त्री विनोद जैसे-कैसे उन गण्य-मान्य हस्तियों के साथ सम्पर्क साधकर अपनी ज्ञान-पिपासा यथा सम्भव पूरी कर ही लेते थे। विशेष कर मालवीय जी का मन तो इन्होंने अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति के साथ-साथ विनम्रता के कारण जीत ही लिया था। इसीलिए मालवीय जी भी इन्हें पितृ-सुलभ प्यार दिया करते थे। संयोग से उन्हीं दिनों विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में कई प्रबुद्ध एवं कवि-कर्म में रुचि रखने वाले छात्र एम.ए. कर रहे थे। इनके साथ गंगादत्त विनोद की मित्रता विश्वविद्यालय के छात्र संघ का सदस्य बनने पर हुई। इतना ही नहीं उन युवा कवियों के सहयोग और प्रेरणा से इनकी कवि-संवेदना भी धीरे-धीरे जागने लगी। परिणामत: यह भी भावपूर्ण कविता रचने लग पड़े। जब छात्रावास में कविता एवं साहित्य प्रेमी छात्रों ने मिलकर 'साहित्य समिति' का गठन किया तो यह पहले उसके सदस्य और फिर सक्रिय कार्यकर्त्ता भी बन गए।

तब इनका विश्वविद्यालय के छात्रों के मध्य आदरणीय स्थान भी बन गया और प्रसिद्धि भी। इन्होंने अपनी प्रसिद्ध हिन्दी रचना 'युगचक्र' (आत्मकथा जैसी) में अपने उस छात्र जीवन की कई अमूल्य स्मृतियां बड़े विस्तार के साथ संजोई हुई हैं। (पृ० 42-70) 1949 में आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद यह जम्मू आकर श्री रघुनाथ संस्कृत महाविद्यालय, जम्मू में अध्यापन कार्य करने लगे। कुछ वर्ष वहां कार्य करने के बाद उस समय के राज्य के सदर-ए-रियास्त डॉ० कर्ण सिंह की पत्नी श्रीमति यशो राज्य लक्ष्मी को दो तीन वर्ष हिन्दी पढ़ाने के कारण उन्हीं की कृपा से आर्थिक सहायता प्राप्त करके 1953 ई० में पुन: बनारस जाकर हिन्दु विश्वविद्यालय के कॉलेज ऑफ़ इन्डालोजी में प्रविष्ट होकर संस्कृत में एम.ए. की परीक्षा के लिए अध्ययन करने लगे। उन्हीं दिनों हिन्दी विभाग में हिन्दी के युवा कवि शिव मंगल सिंह सुमन और नरेश मेहता भी हिन्दी में एम.ए. कर रहे थे। संयोगवश उन्हीं दिनों हिन्दी और संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् और लेखक डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी उस विभाग में विभागाध्यक्ष नियुक्त हुए थे।

जैसे कि पहले ही कहा जा चुका है कि गंगा दत्त विनोद का स्वभाव बड़ा ही गुण ग्राही और जिज्ञासु था, अत: स्वाभाविक था कि संस्कृत एम.ए. का छात्र होते हुए भी इन्होंने हिन्दी विभाग के उक्त दो छात्रों से भी सम्पर्क साध लिया और उन्हीं के माध्यम से डॉ० हजारी प्रसाद जी को भी एक दिन प्रणाम करने चले गए और उनसे ऐसी आशीर्वाद प्राप्त की कि जब तक वाराणसी में रहे उनके पास लगातार जा-जा कर उनसे अपनी जिज्ञासा की पूर्ति करते रहे। इतना ही नहीं इन्होंने शिव मंगल सिंह सुमन और नरेश मेहता के साथ छात्रों की साहित्य समिति

में भी सम्मिलित होना आरम्भ ही नहीं किया बल्कि अपनी कवि संवेदना को भी गति देनी आरम्भ कर दी। अपने विनोदी स्वभाव एवं कवि कर्म के प्रभाव से यह समिति के छात्रों में प्रसिद्ध ही नहीं हो गए अपितु एक बार चुनाव में उसके प्रधान भी चयित हो गए। उस समय यह यद्यपि सभी छात्रों के साथ मित्रभाव तो रखते ही थे, परन्तु शिव मंगल सिंह सुमन के साथ तो उनकी प्रगाढ़ मित्रता भी हो गई थी। अपनी रचना 'युग चक्र' के पृ० 58 पर लिखते हैं- "हिन्दु विश्वविद्यालय में श्री शिव मंगल सिंह सुमन के साथ मेरी अच्छी दोस्ती हो गई थी। दोनों एक ही संस्था के छात्र, दोनों हिन्दी में लिखने के शौकीन तथा दोनों पास-पास के होस्टलों में रहने वाले थे। यह अलग बात थी कि उस समय मैं कवि के रूप में छात्रों की गोष्ठियों तक ही सीमित था। मैंने अपनी कविता का आदर्श सुमन जी को ही बना लिया था, तथा समय-समय पर जो लिखता, उन्हें दिखा देता। वे कुछ-कुछ संशोधन भी कर देते। यह सब मित्रता के वातावरण में ही होता था।"

गंगादत्त विनोद जी का सौभाग्य था कि इन्हें तीसरी बार 1957 ई० में फिर छात्र रूप में बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय में दो वर्ष रहकर हिन्दी में एम.ए. करने का अवसर प्राप्त हुआ। वहां से लौटकर यह राजकीय शिक्षा विभाग में प्राध्यापक की नौकरी प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो गए, परन्तु क्योंकि उस समय उच्च शिक्षा विभाग में प्राध्यापक की नौकरी करने के लिए आयु सीमा 28 वर्ष थी, जब कि उस समय इनका आयुवर्ष तेंतीसवां चल रहा था, अतः एतदर्थ कठिनाई उपस्थित हो गई। तब इन्होंने कुछ मित्रों की सम्मति से तत्कालीन शिक्षा मन्त्री गुलाम मोहम्मद सादिक से मिलना उचित समझा ताकि उनके विशेष आदेश से आयु सीमा के बन्धन को हटाने के लिए प्रार्थना की जा सके। परिणामतः शिक्षा मन्त्री के विशेष आदेश से इनकी अध्यापक के रूप में राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, रामबन (जम्मू) में नियुक्ति हो गई। वहां यद्यपि यह अल्पावधि तक ही रहे तो भी इन्होंने स्थानीय लोगों तथा छात्रों में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त कर ली। क्योंकि जैसे ऊपर कहा ही गया है कि इनका स्वभाव एवं व्यवहार बड़ा ही मिलनसार और मधुर था, जिससे यह जिसे भी मिलते उसी के प्रति आकर्षित होकर अपना मित्र बना लिया करते थे। वहां से कुछ समय के बाद इनकी नियुक्ति राजकीय महाविद्यालय सोपोर (कश्मीर) में हुई। वहां इन्होंने चार वर्ष संस्कृत प्राध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य किया। उसके बाद इनका स्थानान्तरण एस.पी. राजकीय महाविद्यालय श्रीनगर (कश्मीर) में हुआ, जहां इन्होंने 10 वर्ष अध्यापन कार्य किया। क्योंकि श्रीनगर शहर जम्मू-कश्मीर राज्य की राजधानी है, अतः स्वाभाविक है कि वहां राजनैतिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आदि हर प्रकार की गतिविधियां चलती ही रहती हैं। परिणामतः इन्होंने अपने स्वभावानुसार केवल साहित्यिक संस्थाओं के साथ ही जुड़कर अपनी बौद्धिक भूख शांत करनी उपयुक्त समझी। उन दिनों श्रीनगर (कश्मीर) में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा की जम्मू-कश्मीर शाखा जम्मू-कश्मीर राज्य के कश्मीर संभाग में बड़ी सक्रियता से हिन्दी का प्रचार कर रही थी। इसकी स्थापना वहां 1956 ई० में हुई थी। तब से समिति द्वारा चलाए हुए कई परीक्षा केन्द्र वर्धा की परीक्षाओं के लिए बच्चों को तैयार करते थे, जिसमें हिन्दु, सिक्ख और मुसलमान

सभी धर्मों से संबंधित सैंकड़ों छात्र/छात्राएं बड़ी उत्सुकता और लग्न से परीक्षाएं देने के लिए सम्मिलित होती थीं। उस समय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की जम्मू-कश्मीर शाखा के पं० शम्भुनाथ अलकौसर-संचालक थे और प्रो० चमन लाल सप्रू मन्त्री थे। अन्य प्रधान इत्यादि पदाधिकारी भी अपने-अपने उत्तरदायित्वों के अनुरूप कार्य करते थे। संक्षेप में समग्र वर्ग एक आन्दोलन का प्रतीक बनकर कार्यरत रहता हुआ हिन्दी का प्रचार करता था। उस समिति के अतिरिक्त वहां कश्यप सभा, हिन्दी प्रचारिणी परिषद् तथा संस्कृत प्रचारिणी सभा इत्यादि साहित्यिक संस्थाओं से जुड़े हुए साहित्यकार अपने-अपने मंच से इन भाषाओं का प्रचार भी करते थे और इनमें लेखनकार्य भी करते थे। प्रो० गंगा दत्त शास्त्री विनोद अपनी रुचि-अनुसार उन संस्थाओं के कार्यक्रमों में सम्मिलित भी होते थे और अपना लेखन कार्य भी करते थे।

1961-62 ई० में जब अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन, दिल्ली ने अपनी संस्था में शताब्दी ग्रन्थ के प्रकाशन की योजना बनाई तो उसके महामन्त्री डॉ० मण्डन मिश्र ने श्रीनगर आकर डॉ० विनोद जी को कश्मीर संभाग का संयोजक नियुक्त करके शताब्दी ग्रन्थ के लिए विद्वानों से लेख लिखवाकर ग्रन्थ का कश्मीर भाग तैयार करवाया था।

उनके बाद प्रो० विनोद स्थानान्तरित होकर राजकीय महाविद्यालय उधमपुर आ गये और वहां एक वर्ष अध्यापन करने के बाद मौलाना मेमौरियल महाविद्यालय जम्मू में आ गए थे। अपने इसी विश्वविद्यालय के 5 वर्षीय कार्य काल में इन्होंने शोध करके जम्मू विश्वविद्यालय से पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की थी। इतना ही नहीं अपने कर्मठ स्वभावानुसार इन्होंने जम्मू की प्रसिद्ध साहित्यिक संस्था-हिन्दी साहित्य मण्डल का 3 वर्ष तक प्रधान पद भी सम्भाला था, जिसकी गतिविधियों में इनके कार्यकाल में अभूतपूर्व सक्रियता आई थी। इसके बाद पर्याप्त अन्तराल के बाद यह राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की जम्मू-कश्मीर शाखा जम्मू के 2 वर्षों के लिए प्रधान भी चुने गए थे। इन्हीं के कार्यकाल में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली ने समिति की वार्षिक आर्थिक सहायता स्वीकृत करनी आरम्भ की थी।

राज्य के राजकीय शिक्षा विभाग से सेवानिवृत्त होने के बाद इन्हें राज्य के धर्मार्थ ट्रस्ट के मुख्य न्यासाधिकारी डॉ० कर्ण सिंह ने श्री रणवीर संस्कृत अनुसंधान पुस्तकालय, जम्मू का निदेशक नियुक्त किया था, परन्तु वहां इन्होंने केवल एक वर्ष कार्य करने के बाद त्यागपत्र दे दिया। उन्हीं दिनों हिमाचल प्रदेश के जांगला (रोहडू) के आदर्श संस्कृत महाविद्यालय की प्रबन्ध समिति के सदस्यों ने एक सर्वसम्मत प्रस्ताव पास करके इन्हें महाविद्यालय का प्रधानाचार्य नियुक्त करके तुरन्त वहां पहुंच कर उक्त पद सम्भालने की प्रार्थना की थी। उक्त महाविद्यालय के प्रधानाचार्य के रूप में इन्होंने अपने 8 वर्षों के कार्यकाल में उसकी काया ही बदल दी, जिससे यह उस राज्य में इतने प्रसिद्ध हो गए कि संस्कृत महाविद्यालय कुल्लू की प्रबन्ध समिति ने इन्हें महाविद्यालय के निदेशक का पद सम्भालने के लिए प्रार्थना की, जिसे इन्होंने स्वीकार कर लिया। उस पद पर सात वर्ष कार्य करते हुए इन्होंने अपनी कार्य कुशलता से जहां महाविद्यालय को उन्नति के शिखर पर पहुंचाया वहां कुल्लू वासियों के हृदयों में भी

अपना आदरणीय स्थान बनाया।

वहां अपना कार्य काल समाप्त करके यह यद्यपि जम्मू आ गए परन्तु कुल्लू के साथ इनका सम्बन्ध बना रहा। इनके जम्मू आ जाने के कुछ वर्षों के उपरान्त जब इनके एक प्रिय शिष्य ने वहां व्यास संस्कृत विद्यालय की स्थापना की तो इन्हें उसका संरक्षक बनने की प्रार्थना की तो इन्होंने सहर्ष अपनी स्वीकृति दे दी। परिणामतः इसी नाते इनका मध्य-मध्य में कुल्लू जाना (विशेषतः ग्रीष्म काल में) बना रहा।

लेखन कार्य

डॉ० विनोद जी जितने प्रशासनिक प्रबन्ध के कर्मठ थे उतने ही अपने लेखन कार्य में भी कुशल थे। अपने जीवन काल में विभिन्न स्थानों में स्थानान्तरित होकर कुछ समय के लिए अस्त-व्यस्त भी हो जाते रहे, परन्तु इन्होंने अपने लेखन-कार्य में कभी बाधा न आने दी। इससे इनकी प्रबल इच्छाशक्ति का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

इनकी प्रकाशित रचनाएं

1. उल्लोल-हिन्दी कविता संग्रह।
2. अनुराग विराग-उपन्यास।
3. चिन्तन के उन्मेष-निबन्ध संग्रह (संस्मरणात्मक)
4. ब्रह्म विवेचन-दार्शनिक निबन्ध।
5. शोध शिक्षा-शोध विधि परिचय।
6. 'ऋग्वेदिक ज्ञान-विज्ञान' वैदिक विज्ञान सम्बन्धी कृति।
7. चण्डी दास ग्रन्थावली-आलोचनात्मक संपादन।
8. मति मन्थन-निबन्धन संग्रह।
9. शनि दर्शन-स्तोत्र संग्रह।
10. इन्कलाब-ए-कशमीर-देश विभाजन के तुरन्त बाद जम्मू-कशमीर में बने परिदृश्य पर आधारित काव्य।
11. तरल तरंग-कविता संग्रह (हिन्दी)
12. युगचक्र-आत्मकथा पद्धति पर लिखे अपने जीवन के संस्मरण।
13. रघुवंश टीका प्रथम सर्ग-बी.ए. के पाठ्यक्रम के लिए (सम्पादित)

14. कुमार संभव टीका (प्रथम-सर्ग)

सम्मान

इनकी संस्कृत-हिन्दी की विद्वता और लेखन कार्य का मूल्यांकन करते हुए इन्हें भारत सरकार ने राष्ट्रपति सम्मान से (राष्ट्रपति भवन में) अलंकृत किया था।

इसके साथ-साथ भारत भर की जिन अनेक संस्थाओं ने सम्मानित किया उनकी संख्या 16 है।

इनकी 'तरल तरंग' शीर्षक कृति (कविता संग्रह) में 55 कविताएं संग्रहीत हैं। इनमें डॉ० विनोद ने अपनी संवेदना के आयाम में अनेक विषयों को समेट कर रूपायित किया है। कवि कहीं पर अपनी सांसारिक प्रेम भावना को अभिव्यंजित करता है तो किन्हीं कविताओं में ज्ञान-गंगा में डुबकी लगाता दृष्टिगोचर होता है।

इस संग्रह में कुछ तो छन्दोबद्ध कविताएं हैं-जबकि कुछ गद्यगीत-विधा से संबंधित हैं। कुछ छन्द मुक्त रचनाएं हैं, तो कुछ दोहों तथा गज़ल विधा से अलंकृत हैं। क्योंकि कवि का जीवन सदा संघर्षशील रहने से वह कई प्रकार के ऊहापोहों से दो-चार होता रहा है, अतः स्पष्ट है कि उसका भोगा हुआ यथार्थ कई कविताओं में प्रतिबिम्बित होना अनिवार्य है। कवि की कविता 'चितवन' संघर्षशील भावनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

कवि विनोद ईश्वर की सर्वशक्ति का अपनी- 'मैं हूं परम पुरुष का रूप' शीर्षक कविता में बड़ा हृदयग्राही चित्रण करते हैं।

- मैं हूं अथाह गम्भीर पहेली,
जग से करता आया अठखेली। (पृ०26)

'चिन्तन के उन्मेष' 'मतिमन्थन' तथा 'युग चक्र' शीर्षक रचनाओं में डा० विनोद ने अपने जीवन के अनेक अनुभवों, संस्मरणों जाने-माने विद्वानों तथा नेताओं के साथ अपनी समय-समय पर मुलाकातों एवं साक्षात्कारों से होने वाली उपलब्धियों को रेखांकित किया है। इससे निश्चय ही इनकी कर्मठता, जिज्ञासु प्रवृत्ति तथा अपने बौद्धिक धरातल को विस्तृत-आयाम देने की महत्वाकांक्षा का पता चलता है। 5 अक्तूबर 2010 को जब इनका निधन हो गया तो जम्मू के बुद्धिजीवी समाज में शोक की लहर दौड़ गई थी। यद्यपि मृत्यु एक अकाट्य एवं कटु सत्य है, परन्तु इस धरती पर आकर जो कोई भी कालजयी काम किसी भी क्षेत्र में कर जाता है तो वह सदा के लिए अमर हो जाता है।